ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-5* August- 2021
Anthology : The Research

शिवाजी के शासनकाल में मराठों की सामाजिक दशाः एक अध्ययन

A Study of The Social Condition of The Marathas During The Reign of Shivaji

Paper Submission: 00/00/2021, Date of Acceptance: 00/00/2021, Date of Publication: 00/00/2021

सुमन यादव
शोधार्थी,
इतिहास विभाग,
रानी दुर्गावती
विश्वविद्यालय, जबलपुर,
म.प्र., भारत

सारांश

मराठा साम्राज्य जिसे मराठा परिसंध के रूप में भी जाना जाता है 17वीं और 18वीं शताब्दी के दौरान भारत के एक बड़े हिस्से पर हावी था। मराठा साम्राज्य औपचारिक रूप से 1674 में छत्रपति शिवाजी के उदय के साथ शुरू हुआ मराठा साम्राज्य दक्षिण भारत में मुगल साम्राज्य के विस्तार और आगमन के परिणामस्वरूप पैदा हुआ था जिसने दक्कन के पठार में व्याप्त अराजकता को समाप्त कर दिया इसलिए, मराठा साम्राज्य को भारत में मुगल शासन को समाप्त करने का श्रेय दिया जाता है और इसे अक्सर एक सच्ची भारतीय शक्ति के रूप में देखा जाता है क्योंकि यह 17वीं और 18वीं शताब्दी के दौरान भारतीय उपमहाद्वीप पर हावी था। अपने चरम पर मराठा साम्राज्य उत्तर में पेशावर से लेकर दक्षिण में तंजावुर तक फैला हुआ था मराठा जिन्होंने दक्कन के पठार से उभरने वाले एक यौद्धा समूह के रूप में शुरूआत की तथा 19वीं सदी की शुरूआत में उनके पतन से पूर्व ही वे भारतीय उपमहाद्वीप के अधिकांश हिस्सों को नियंत्रित करने के लिए चले गए।

Maratha Empire also Know as Maratha confederation do minated a large part of India during the 17th and 18th centuries The maratha Empire formally began with the rise of chhatrapati Shivaji in 1664 The Maratha Empire across as a result of the expansion and arrival of the Mughal Empire in south India who put an end to the chase in the Deccar stone Hance the maratha Empire is credited with ending the Mughal rule in India . and is often seen as a true Indian Power because it dominated the Indian subcontinent in the 17th and 18th centuries At its height ,the Maratha Empire extended from the Peshawar in the north to thanjavur in the south Marathas who started as a warrior group emerging from the Deccan stone ,And before their fall in the early 19th century ,they went on to control most of the Indian subcontinent.

मुख्य शब्द : जन साहित्य, मातृ भाषा, स्वराज्य, जातीय समानता, भक्तिभाव, चरित्र वर्णन

Keywords: Public Literature ,only language Sovereign ,ethnic equality devotion character building

प्रस्तावना

महाराष्ट्र देश सुख और स्वास्थ्यप्रद रहा। इस प्रकार के जलवायु का गुण भी नहीं था क्योंकि इतने कठोर जीवन के कारण मराठों के स्वभाव में अपने आप पर भरोसा रखना, साहस, मेहनत ढोंग रहित जीवन, सीधा-सादा व्यवहार, समाज में सभी के साथ एक सा बर्ताव और प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के मान सम्मान का ख्याल तथा स्वाधीन रहने की इच्छा इत्यादि बड़े बड़े गुण उत्पन्न हुए थे। सातवीं सदी में चीन के यात्री हुयानचुयाड ने स्वयं मराठों के जीवन चरित्र का वर्णन कर लिखा- "इस देश के रहने वाले तेज और लड़ाकू है ये उपकार को कभी नहीं भूलते और अपकार करने वाले से उसका बदला लेना चाहते है। कोई तकलीफ में हो और मदद चाहे तो वे अपना सर्वस्व त्याग करने को तैयार हो जाते है और अपमान करने वाले को बिना मारे नहीं छोड़ते

है। बदला लेने के पहले वे शत्रु को चेतावनी भी देते है।"

मराठों का जन-साहित्य भी इस जातीय एकता-बन्धन में सहायक हुआ, तुकाराम, रामदास, वामन पण्डित और मोरोपन्त प्रमृति सन्त कवियों के सरल मातृ-भाषा में रचित गीत और नीति-वचन घर-घर पहुंचे। "दक्षिण देश और कोंकण के हर एक शहर और गाँव में, खासकर वर्षा के समय, धार्मिक मराठा गृहस्थ घर के बाल बच्चों और बन्धुवर्ग-सहित भक्ति भाव से श्रीधर कवि की 'पोथी' का पाठ सुनते थे। जब चरम करूणारस का वर्णन आता तब श्रोता एक साथ दुखी होकर रो पड़ते तब पढ़ने वाले की आवाज भी नहीं सुनाई देती थी।

इस प्रकार सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में महाराष्ट्र की भाषा, धर्म, विचार और जीवन में एक आश्चर्यजनक एकता और समानता की सृष्टि हुई थी। शिवाजी ने बाकी रह गई राष्ट्रीय एकता की कमी को भी पूरा कर दिया। उनके द्वारा सर्वप्रथम जातीय स्वराज्य स्थापित किया। उन्होंने दिल्ली पर शासन करने वालों को अपने देश से निकाल बाहर करने के लिए जिस युद्ध का सूत्रपात किया था, उसी में बहाए गए रक्त से उनके वंशजों में एकता उत्पन्न हुई।

विषय विस्तार

भारत में मराठा शक्ति के अभ्युदय और विकास का श्रेय छत्रपति शिवाजी को प्राप्त है, परन्तु दक्षिण भारत की विचित्र, भौगोलिक स्थिति भी कम महत्वपूर्ण नहीं थी जिसने वहाँ के समाज को एक सूत्र में बाँधा कर उसे नई उमंगों व भावनाओं से पुनर्जीवित किया। महाराष्ट्र प्रदेश की विशिष्ट भौगोलिक स्थित के कारण यहाँ के निवासियों से भिन्न थे। दक्षिण की पर्वतमालाएँ मराठों की बाहर के आक्रमणकारियों से रक्षा करती थी। महाराष्ट्र में वर्षा की कमी और जीवन-यापन की कठिनाईयों ने मराठों को कठोर परिश्रमी तथा आत्मविश्वासी बना दिया। पर्वतीय प्रदेश के कारण ही मराठे छापामार मुहदनीति सफलता से अपना सकें।[1] बीच-बीच से टूटी हुई पर्वत श्रृखलाएँ उनके लिए सुगम प्राकृतिक दुर्गो का काम देती थी। महाराष्ट्र की जनता वहाँ के दुर्गो का अपनी माता के समान सम्मान करती थी। मराठों में आत्मविश्वास, साहस, सहिष्णुता, सादगी, स्पहर वादिता और सामाजिक एकता कूट-कूट कर भर दी थी। मराठों में सामाजिक रूप से कोई भेदभाव नहीं था और उनकी स्त्रियाँ उनकी शक्ति और देशभक्ति में पूरी साझीदार व सहायक थी।[2]

इस काल में भक्ति आन्दोलन में मराठों में संगठन की भावना ने जोर पकड़ा। उस समय के सन्तों की शिक्षा प्रमुखतः ईश्वरोपासना और सब मनुष्यों का जाति-पाँति और ऊँच-नीच के भेदभाव के बिना, ईश्वर के समक्ष एक समाज होना था। इस प्रकार तत्कालीन सन्तों के उपदेशों ने महाराष्ट्र निवासियों को मनुष्यमात्र के प्रति प्रेम और प्रभु के प्रति अखंड की अटूट श्रंखलाओं में बाँध कर संगठित किया। इस काल के प्रमुख नेता तुकाराम, रामदास, वामन पण्डित, एकनाथ आदि थे, जिनका देशवासियों पर बड़ा प्रभाव था। समाज सुधार के कार्यो में वे अग्रणी थे। शिवाजी के गुरू रामदास ने अपनी पुस्तक दशबोध में कर्मयोग की शिक्षा दी है। वे केवल धर्मगुरू ही नहीं अपितु एक राष्ट्र-निर्माता भी थे। इस समय का धार्मिक आन्दोलन कट्टर ब्राह्मणपंथी नहीं अपितु प्रगतिवादी था। इसमें पूजा-पाठ की विधि और जन्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था का विरोध था तथा चारित्रिक पवित्रता, मानव प्रेम, परोपकार आदि गुणों का समर्थन था। यह धार्मिक पुनरूद्धार जन-साधारण का कार्य था। प्राचीन वर्णव्यवस्था पर स्थित धर्म परिपाटी का नहीं था। इस धार्मिक सुधारवाद के नेता संत, योगी, कवि और बड़े दार्शनिक थे, जिनका जन्म ब्राम्हणों से कहीं अधिक दर्जी, बढ़ई, कुम्हार, माली, नाई आदि निम्न जातियों में हुआ था।[3]

महाराष्ट्र में जाति भेद अवश्य विद्यमान था, किन्तु उसकी उत्पत्ति बालाजी विश्वनाथ पेशवा से ही नहीं हुई थी। यह भेद तो बहुत पुराना था और भारतवर्ष के दूसरे भागों में भी महाराष्ट्र ही के समान हजारों वर्षो से प्रचलित था। ऐसी दशा में उसका दुष्परिणाम अठारहवी सदी के अन्त में ही हुआ हो, यह नहीं कहा जा सकता है पूर्व में जब मुस्लिमों ने महाराष्ट्र का भाग जीत लिया था और जब मराठों ने मुगलों से राज्य को छुड़ाया व शिवाजी ने नवीन स्वतंत्र राज्य भी स्थापना की उस समय भी था।[4] मुगलों द्वारा पुनः महाराष्ट्र पर अधिकार कर लेने पर राजाराम के समय 20 वर्षो तक बराबर युद्ध कर मराठों द्वारा अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने पर, फिर सवाई माधवराव के

समय मराणशाही के विनाश होने पर भी यह जाति-भेद विद्यमान था।[5] जब शिवाजी द्वारा महाराष्ट्र मंडल को मिलाकर मुसलमानों से देश की रक्षा करने की योजना बनाई थी, उस समय उन्होंने जाति-भेद के विरूद्ध व्याख्यान नहीं दिया उन्होंने अपने राज्य में केवल गुण को और कत्र्तव्य परायण पुरूषों को अपने पास खींच लिया तथा अक्रर्मव्यों को दूर कर दिया। उन्होंने कभी यह भेद नहीं किया कि आमुक ब्राम्हण है और आमुक मराठा है और ऐसी स्थिति में जबकि शिवाजी सनातन पद्धति के अनुसार जाति-भेद के कट्टर मानने वाले थे, उन्होंने लोगों का चुनाव सद्गुणों के कारण किया न कि जाति भेद या समाज सुधार के द्वेष से।[6]

भारतीय समाज वास्तव में धर्म पर आश्रित है। अतः जब भी किसी ने सामाजिक सुधार का प्रयत्न किया तो पग-पग पर लोगों की कट्टर धार्मिक भावनाएँ मार्ग में आई। अतः उन्होंने इसका सम्बल लेकर ही अपना कार्य किया और इसमें उन्हें आशातीत सफलता मिली। शिवाजी पूर्ण हिन्दू धर्ममिमानी थे। इसी के बल पर उन्होंने राष्ट्र को जागृत किया था।[7] उनको सनातन धर्म का अभिमान था, जिसमें वर्ण-व्यवस्था विद्यमान थी। ऐसी दशा में उन्हांने चातुर्वण्र्य विशिष्ट हिन्दू का अभिमान प्रदीप्त कर ब्राम्हण और मराठों को कंधे से कंधा मिलाकर प्राण हथेली में ले लड़ने को तैयार किया तो इससे यही प्रयोजन निकलता है उनके हृदय पर जो धर्म की छाप बैठी थी, उससे उनके कार्य में जाति भेद अथवा जाति-द्वेष आड़े नहीं आता था।[8]

जातिभेद तथा जाति द्वेष के साथ-साथ मराठाशाही में बेगार और गुलामी की प्रथा भी विद्यमान थी। उस समय गुलामों को दूखकर उन्हें भरपेट खाने को दिया जाता था और सख्ती से नौकरी कराई जाती थी। गुलामों तथा निम्न जाति की स्त्रियों की खरीद तथा बिक्री भी होती थी आवारा औरतों को लाकर विदेशी व्यापारी यहाँ बेचते थे, किन्तु गुलामों के साथ पाश्चात्य देशों सा निर्दयता का व्यापार नहीं होता था गुलामी से केवल स्वातन्त्रय नाश और इच्छा के विरूद्ध नौकरी करने का प्रयोजन था। खानदेश में वंश परम्परागत सालाना काम करने वाले नौकरों की भाँति ही उस काल के गुलाम होते थे स्वामी की नौकरी ईमानदारी से करने पर गुलामों को इनाम दिया जाता था लड़कियों की गिनती पायमा के जानवरों के साथ या मनुष्यों में की जाती थी और उनका हिसाब रखा जाता था। लावारिस या अनाथ और अत्यन्त दरिद्रो के ऊपर गुलामी की आपत्ति प्राय सब देशों और कालों में आती रही है। अंगे्रजी साम्राज्य में भी यह प्रथा विद्यमान थी। उपनिवेशो में तो यही रीति अप्रत्यक्ष रूप से आज भी विद्यमान है।[9]

मराठाशाही में यह मान्यता भी विद्यमान थी कि वर्ण व्यवस्था के कारण लिखने पठने का काम ब्राम्हणों का ही था। उन्होंने अपना यह काम सम्भाल लिया था, अतः उन्हें शिक्षा के निमित्त धर्मादा की एकम में से बहुत कुछ मिल जाया करती थी। इस सम्बन्ध में पेशवा ने भिन्न-भिन्न जातियों के अन्दर भेदों का अभिमान कभी नहीं किया। काशी से रामेश्वर तक पेशवा के धार्मिक दान पहुँचते थे। श्रावण पंचगौड़ो का भी सम्मान किया जाता था। वेदविधा की शिक्षा के अतिरिक्त जातिभेद का प्रश्न उस अन्य बातों में नहीं दिखलाई पड़ता था। मराठाशाही में मुसलमानों के फकीर भौलिया और साधू-सन्तों तथा देवस्थानों को दान दिए जाने के उदाहरण मिलते है। इसी तरह धमार्थं वैघकी करने वालों, शस्त्र क्रिया करने वालों, बावड़ी बनाने वालों या मार्ग छाया करने के लिए पेड़ लगाने वाले अथवा पानी टंकी बैठाने वालों को उनकी जाति का लक्ष्य न रखकर इनाम दिया जाता था। शाह महाराज के रोजनामचे में असर के रण छोड़ नामक वैघ, राजंमुहम्मद हकीम, बागलाण वाले नरहर के पुत्र नारोराम वैघ, भवानी शंकर गुजरात, फीरमाह जीग वैघ, खं्ुडण्डा, मीर अपुतलब आदि लोगों के नाम मिलते है, जिन्हें सरकार की ओर से कुल लाभ दिया जाता था।[10]

अध्ययन के उद्देश्य

शिवाजी के शासन में सभी जातियों एवं धर्म-सम्प्रदाय अपनी-अपनी उपासना की स्वाधीनता और संसार में उन्नति करने का समान सुयोग पाते थे। देश में शांति और सुविचार, सुनीति की जय और प्रजा के धन-मान की रक्षा के एकमात्र कारण केवल वे ही थे। भारत वर्ष के समान नाना वर्ण

और धर्म के लोगों से भरे हुए देश में शिवाजी द्वारा संचालित इस राजनीति से बढ़कर उदार और कल्याण करने वाली किसी भी दूसरी नीति की कल्पना नहीं की जा सकती।

निष्कर्ष

शिवाजी मराठा जाति के निर्माता थे, और साथ ही मध्यकालीन भारत के सर्वश्रेष्ठ रचनात्मक प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति भी। राज्यों का अन्त हो जाता है साम्राज्य बन कर छिन्न-भिन्न हो जाते है, महान घरानों का नाम लेता भी नहीं रह जाता है परन्तु तब भी शिवाजी के समान वीर साम्राज्यों की सुस्मृति सारे जन-समाज के लिए अमूल्य वसीयत के रूप में रह जाती है और पतित राष्ट्र के लिए आशा किरण बनकर प्रकट होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *डॉ. एस.सी. मिश्रा, प्रताप सिंह, मराठों का इतिहास, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर पृष्ठ संख्या-309*
2. *डॉ. एस.सी. मिश्रा, प्रताप सिंह, पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या-311*
3. *यदुनाथ सरकार, शिवाजी, पब्लिकेशन स्कीम जयपुर-इंदौर, 1985, पृष्ठ संख्या-124*
4. *यदुनाथ सरकार, पर्वोक्त, पृष्ठ संख्या-127*
5. *डॉ. एस.सी. मिश्रा, प्रताप सिंह, पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या-311*
6. *डॉ. एस.सी. मिश्रा, प्रताप सिंह, पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या-314*
7. *डॉ. एस.सी. मिश्रा, प्रताप सिंह, पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या-322*
8. *डॉ. सतीश चन्द्र, उत्तर मुगलकालीन भारत का इतिहास, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ, दिल्ली, पृष्ठ संख्या-302*
9. *एल.पी. शर्मा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, मध्यकालीन भारत आगरा, पृष्ठ संख्या- 205*
10. *डॉ. एस.सी. मिश्रा, प्रताप सिंह, पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या-317*